ORIGINAL RESEARCH PAPER

History

KEY WORDS:

जोधपुर राज्य में पंचायतों का ऐतिहासिक स्वरूप

Balveer Choudhary

Govt. College Jodhpur

ABSTRACT

प्राचीन काल से ही भारतवर्ष के जन–जीवन में पंचायतों का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। पंचों का चुनाव उनकी योग्यता, सच्चाई, अनुभव, प्रतिष्ठा व पद के आधार पर होता था। आयु का प्रश्न गौण था। कुछ जातियों में वंशानुगत पंच भी होते थे। न्याय करते समय पंचों की भाषा मारवाड़ी रहती थी। समय व परिस्थिति के अनुसार जाति के नियमों के पालन में शिथिलता आने पर पंच पंचायत की बैठकें बुलवाते थे ताकि उन नियमों में समुचित परिवर्तन किया जा सके। पंचायत के समय पंचों के बैठने की व्यवस्था जातियों में पृथक्–पृथक् थी। उच्च जातियों के पंच 'बिछायत' के ऊपरी भाग पर बैठा करते थे, तो जाटों के पंच अर्द्धचन्द्राकार पंक्ति में बैठते थे। सभी प्रयासों के असफल हो जाने पर सच्चाई जानने के लिए दिव्य परीक्षा का सहारा लिया जाता था।

प्राचीन काल से ही भारतवर्ष के जन–जीवन में पंचायतों का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। लगभग सभी गांवों या नगरों में वहां के वयोवृद्धों की एक सभा होती थी, जिसे महाजन सभा कहते थे।[1] महाजन सभा के अधिकार बड़े विस्तृत थे। उसे अपने गांव या नगर में कुछ कर या चुंगी लगाने का अधिकार था। लोगों के जीवन तथा उनके धन सम्पत्ति की सुरक्षा के लिए वह पुलिस का कार्य करती थी। सार्वजनिक कार्यों के व्यवस्था के लिए तथा स्थानीय समस्याओं के लिए उस सभा के सदस्य समय–समय पर विचार विमर्श किया करते थे। परन्तु सभा के सदस्यों की संख्या अधिक होने के कारण उसका कार्य, कुछ सदस्यों की एक समिति करती थी। उस समिति को 'पंचकुल' के नाम से पुकारा जाता था।[2] 'पंचकुलों' ये संख्याएँ पहले भी भारत में विद्यमान थीं। धीरे–धीरे महाजन–सभा का स्थान पंचकुलों ने ले लिया। ये ही ''पंचकुल'' बाद की शताब्दियों में, मारवाड़ में पंचायतों के रूप में कार्य कर रहे थे।

पंचायतों का संगठन

साधारणतया किसी भी पंचायत में पंचों की संख्या पांच होती थी फिर भी जनसंख्या के अनुपात से उनकी संख्या कम या अधिक हो सकती थी। उच्च जातियों की पंचायतों में, विभिन्न जातियों के गोत्रों का पृथक्–पृथक् प्रतिनिधित्व होता था।[3] मेड़तिया सिलावटों में पांच घरों के पीछे एक पंच होता था। मोचियों में चार पंच और चौधरी होता था। खटीक, कुम्हार, मुसलमान, छीपे व लोहार आदि जातियों में पंच महत्तर कहलाते थे।[4]

पंचों का चुनाव

पंचों का चुनाव उनकी योग्यता, सच्चाई, अनुभव, प्रतिष्ठा व पद के आधार पर होता था। आयु का प्रश्न गौण था। कुछ जातियों में वंशानुगत पंच भी होते थे। मोची, कुम्हार, भांभी व माली आदि जातियों के चौधरियों की नियुक्ति राज्य द्वारा होती थी।[5] जाति पंचायत में एक जाति विशेष के पंच होते थे। परन्तु ग्राम पंचायत में विभिन्न स्वर्ण जातियों के पंचों व राज्य का प्रतिनिधित्व होता था। पंच एक बार चुने जाने पर जीवन पर्यन्त अपने पद पर रहते थे परन्तु राज्य द्वारा नियुक्त पंच शुल्क की अवधि समाप्ति के पश्चात् बदले जा सकते थे।[6]

बैठक

समय व परिस्थिति के अनुसार जाति के नियमों के पालन में शिथिलता आने पर पंच पंचायत की बैठकें बुलवाते थे ताकि उन नियमों में समुचित परिवर्तन किया जा सके।[7] पारस्परिक झगड़ों में वादी द्वारा पंचों के घर जाकर प्रार्थना करने पर पंचायत की बैठकें बुलाई जाती थी।[8] पंचायत की बैठक सामान्यतः किसी व्यक्ति के मकान, जाति के नौहरे, मन्दिर, मस्जिद या खुले स्थान में किसी पेड़ के नीचे होती थी। जाट लोग गांव की चौपाल में अपनी पंचायत करना पसन्द करते थे।[9]

पंचायत के समय पंचों के बैठने की व्यवस्था जातियों में पृथक्–पृथक् थी। उच्च जातियों के पंच 'बिछायत' के ऊपरी भाग पर बैठा करते थे, तो जाटों के पंच अर्द्धचन्द्राकार पंक्ति में बैठते थे। उन्हें विश्वास था कि पूर्वजों के वरदान से उस शिला पर बैठने वाला न्याय समुचित ढंग से कर सकेगा।[10] बालदिये, खटीक, कालबेलिये आदिजातियों के पंच भूमि पर गोल कुण्डल बनाकर आमने–सामने बैठ कर पंचायत किया करते थे।

न्याय करते समय पंचों की भाषा मारवाड़ी रहती थी। चढ़वों के पंच आपस में तो मुलतानी भाषा में बातचीत करते थे परन्तु दूसरों से मारवाड़ी–मिश्रित उर्दू भाषा में बातचीत करते थे। निम्न जातियों में वादी और प्रतिवादी दोनों पंचों के सम्मुख निर्णय प्राप्त करने के लिए अपनी लाठियाँ डाल देते थे। यह उनकी एक प्रकार से पंचों द्वारा किए जाने वाले न्याय से सहमति की सूचक थी। पंचों को पंचायत की बैठक तक लाने वाले खर्च का भार इन्हीं लोगों को उठाना पड़ता था जो मुख्यतः शराब, अफीम व तम्बाकू पर होता था।[11]

सरपंच या अन्य कोई प्रतिवादी को उसके विरुद्ध लगाए गए वादी के आरोपों को सुनाता था। यदि प्रतिवादी अपने विरुद्ध लगाए गए आरोपों को स्वीकार कर लेता था, तो पंच अपने निर्णय में उस पर लगाए जाने वाले दण्ड का निश्चय करते थे। प्रतिवादी द्वारा उस पर लगाए गए आरोपों के अस्वीकृत किए जाने पर वादी तथा प्रतिवादी दोनों अपने पक्ष में साक्षी व प्रमाण–पत्र उपस्थित करते थे। इस प्रकार एक लम्बा वाद–विवाद उठ खड़ा होता था।[12] सच्चाई जानने के लिए पंच साक्षियों से विवाद के सम्बन्धित कुछ प्रश्न करते थे। साक्षियों को सत्य वृत्तान्त कहने की शपथ दिलवाई जाती थी। शपथ–पुत्र की भुजा पर हाथ रखकर, या गीता या कुरान हाथ में देकर या किसी मन्दिर में मूर्ति को साक्षी रखकर दिलवाई जाती थी। राजकीय न्यायालयों में ''गद्दी की आन'' की शपथ दिलवाई जाती थी।[13] उस समय लोग झूठी शपथ खाने से डरते थे। अतः शपथ वस्तुस्थिति की सच्चाई को प्रमाणित करने के लिए पर्याप्त समझी जाती थी। लिखित प्रमाण पत्रों की सत्यता की जांच करते थे और अपना निर्णय अधिकतर उन्हीं के आधार पर देते थे।[14] निर्णय देते समय पंच एकमत होकर ही निर्णय देते थे परन्तु एकमत न होने पर बहुमत के आधार पर भी निर्णय दे दिया करते थे।

पंचों के न्याय से सन्तुष्ट न होने वाला व्यक्ति राजकीय न्यायालयों की शरण ले सकता था। परन्तु राजकीय न्यायालय भी न्याय पंचायतों द्वारा ही करवाते थे। वादी तथा प्रतिवादी दोनों पंचायत के लिए अपनी–अपनी ओर के पंचों को कोतवाली चौंतरे या अन्य किसी निर्धारित स्थान पर एकत्रित करते थे। इस पंचायत की अध्यक्षता राज्य द्वारा नियुक्त पदाधिकारी करता था।[15] पंचायत की कार्यवाही प्रारम्भ होने से पहले वादी तथा प्रतिवादी दोनों एक मुचलका भरते थे। पंचायत के निर्णय से सन्तुष्ट न होने वाला व्यक्ति राज्य में मुचलके के पैसे भर कर दो या तीन बार पंचायत की बैठक या जब तक संतुष्ट नहीं होता, बुलवा सकता था।[16]

गांवों के चारागाहों, तालाबों इत्यादि के झगड़ों में जहां एक से अधिक व्यक्तियों का स्वार्थ रहता था, निर्णय सम्बन्धित गांवों के पंचों पर छोड़ दिया जाता था। कभी–कभी स्थिति की गम्भीरता को देखते हुए दो या उससे भी अधिक गांवों के पंचों द्वारा पंचायत कराई जाती थी। गांव खेड़ूली व पोलावास के लोगों के बीच चारागाह में पशु चराने के झगड़ों को ग्यारह गांवों के पंचों ने मिलकर तय किया था।[17]

सभी प्रयासों के असफल हो जाने पर सच्चाई जानने के लिए दिव्य परीक्षा का सहारा लिया जाता था। इसमें वादी या प्रतिवादी किसी मन्दिर या मस्जिद में जाकर ईश्वर को साक्षी मानकर अपने सच्चे होने की शपथ लेता था। सच्चाई की परीक्षा के लिए कुछ दिनों की अवधि निश्चित कर दी जाती थी। उस अवधि में शपथ लेने वाले को किसी प्रकार की हानि हो जाती तो वह झूठा माना जाता था। पन्द्रह दिन की अवधि में शपथ खाने वाले के जीवन में निम्नलिखित घटनाओं में से यदि एक भी घटना घट गई तो वे उन्हें झूठा और दोषी करार देंगे –

1. उसके घर में किसी व्यक्ति या पशु की मृत्यु हो जाए।
2. चलते फिरते के चोट लग जाए और उसके हाथ पैर या सिर फूट जाए।
3. वह पानी में डूब जाए।
4. उसके घर में चोरी हो जाए।
5. उस पर चोरी का अभियोग लग जाए।
6. यदि उसने कोई चोरी पहले की हो परन्तु वह इन दिनों में प्रकट हो जाए।
7. आकाश से ओले गिरें और उसके लग जाए।
8. अधिक अफीम के प्रयोग से उसकी मृत्यु हो जाए।

गांव बिराई के पंच पन्द्रह दिन तक अपने सभी कार्यों से मुक्ति पाकर कासटी के पंचों के घर केवल यही जानने के लिए रहे कि ईश्वर को क्या स्वीकार है।[18]

पवित्र प्राणियों का वध या धर्मनिषिद्ध कार्य करने वाला व्यक्ति स्वतः ही अपने अपराध स्वीकार कर लेता था। उसके अन्तराल में प्रायश्चित की भावना रहती थी। लोगों का विश्वास था कि यदि इस लोक में उन्होंने अपने पापों का प्रायश्चित नहीं किया तो उनको दूसरे लोक में यमराज के हाथों कठोर दण्ड भोगना पड़ेगा।[19]

पंचायतों का कार्य मौखिक होता था। परन्तु राज्य की ओर से बुलाई गई पंचायत के कार्य का विवरण व निर्णय राज्य द्वारा नियुक्त पदाधिकारी द्वारा लिपिबद्ध किया जाता था।[20] पंचायत के निर्णय से सहमत हो जाने पर वादी तथा प्रतिवादी दोनों आपस में 'राजीनामा' लिखते थे। पंचायत द्वारा किए गए किसी न्याय की 'दूडी' (हल्ला पड़ना) समस्त जाति या गांव के लोगों में पिटवा दी जाती थी, जिससे जनसाधारण अपराध व उस पर मिलने वाले दण्ड से अवगत हो जाता था।[21]

कार्य क्षेत्र

पंचायतों का कार्य क्षेत्र बहुत विस्तृत था। उन्हें व्यवस्थापिका, कार्यपालिका तथा न्यायपालिका सम्बन्धी बहुत अधिकार प्राप्त थे। जाति पंचायतें, अपनी जाति की उन्नति के लिए समय–समय पर नियम बनाती थीं। जोधपुर के मालियों ने संवत् 1947 में इकट्ठे होकर संगाई, विवाह, नाता, गोद, तलाक, खान–पान, वेशभूषा इत्यादि के लिए कुछ नियम बनाए। जाति के सभी लोगों ने, जो वहां उपस्थित थे इन नियमों का पालन करने की शपथ खाई और कहा उनके वंशजों में से किसी ने इन नियमों का पालन नहीं किया तो उन्हें चौहत्तर गायें मारने का पाप लगेगा और वे ईश्वर और गंगाजी से विमुख होंगे।[22] संवत् 1918 में घांचियों ने अपनी जाति के आपसी झगड़ों की हिंसावृत्ति को मिटाने के लिए यह निश्चय किया कि वे अपने आपसी झगड़ों में कभी भी कानून को हाथ में लेकर, लड़ाई–झगड़ों नहीं करेंगे और यदि उनमें से कोई ऐसा करेगा तो वह जाति और राज्य दोनों के दण्ड का भागी होगा।[23] इसी तरह मेणों व भीलों के पंचों ने मिलकर गाय का वध न करने की शपथ खाई और भविष्य में गाय का वध करने वालों को सदा के लिए जाति से बहिस्कृत करने का नियम बनाया।[24] संवत् 1940 में मेहरों की जाति ने किसी स्त्री को अपने पति के जीवित रहते किसी दूसरे के घर नाते जाने के सम्बन्ध में कुछ प्रतिबन्ध लगाए।[25] कार्यपालिका के रूप में पंचायत अपनी जाति के नियम व मर्यादाओं का पालन जाति के लोगों से करवाती थी। जाति–भोज का आयोजन पंचों की अनुमति से ही होता था। ऐसे भेज की सारी व्यवस्था पंचों द्वारा की जाती थी।[26] जाटों में पेड़ा उघाड़ मौसर जिसमें गांव–गांव के लोग निमंत्रित होते थे, भोज की व्यवस्था दूसरे गांवों के पंच किया करते थे।[27] जाति भोज में जाति शिष्टाचार के पालन का पंच बड़ा ध्यान रखते थे। ब्राह्मणों के पंच निर्धारित वेशभूषा पहन कर न आने वाले को भोज में सम्मिलित नहीं होने देते थे। उच्च जातियों में जिनमें 'दसों' और 'बीसों'

का भेद होता था, पंच दसों की पंक्ति अलग लगवाते थे और इस बात का ध्यान रखते थे कि कहीं 'दसे', 'बीसों' की पक्ति में आकर न बैठ जाए। पंच स्वयं सब के खाना खाने के पश्चात् भोजन करते थे। उनके भोजन करने के उपरान्त यदि कोई भूखा रह भी जाता तो उनकी कोई कहा– सुनी नहीं होती थी।[28]

विवाह शादी या अन्य कोई अवसर पर बनने वाले भोज में पंच, साधारणतया किसी भी प्रकार के परिवर्तन की आज्ञा नहीं देते थे। यदि कोई व्यक्ति किसी भोज में विशेष सामग्री बनवा भी देता तो पंच उसका उपभोग जाति के लोगों को नहीं करने देते थे, और उस भोज का पूर्ण बहिष्कार करवा देते थे। इसमें पंचों की भावना रीति–रिवाजों में होने वाले व्यय को न बढ़ने देने की रहती थी, जिससे जाति में ऊंच–नीच की भावना उत्पन्न न हो, और गरीब से गरीब का निर्वाह भी अच्छी तरह से हो सके।[29]

सगाई, विवाह, गोद, नाता, तलाक इत्यादि कुछ जातियों में पंचों की उपस्थिति में सही माने जाते थे। कुछ मुसलमान जातियों में विवाह की तिथि निश्चित करते थे।[30] गिरासियों के पंच और सेलोत मिलकर वधू के पिता को पेरावणा व ताणना विवाह की रस्में दिलवाते थे।[31] बांडा कुम्हारों में घर–जंवाई यदि निर्धारित अवधि से पहले स्वसुर का घर छोड़ कर जाना चाहता तो उसका मेहनताना पंच से ही तय करते थे।

पंच अपनी जाति के लोगों से कुछ धन कर–स्वरूप प्राप्त कर पंचायत कोष में जमा करवा देते थे। इस कोष में कुछ जातियाँ विवाह, संगाई, गोद इत्यादि के अवसर पर आने वाली 'पंचो की लागत' जमा करवाती थी। होली के अवसर पर होने वाली बच्चों की ढूंढ व डंडिया गेर में भाग लेने वालों पर की गई न्यौछावर की धनराशि तथा अपराधियों से दण्ड स्वरूप प्राप्त धन भी पंचायत कोष में जमा होता था। किसी विशेष अवसर पर पंचायत कोष में कमी देख, पंच लोगों से चन्दा प्राप्त कर उसे पूरा करते थे। इस प्रकार से अर्जित धन राशि का उपयोग सार्वजनिक कार्यों के लिए किया जाता था। निम्न जातियाँ इसका उपयोग राज्य का कर भरने में भी करती थी। पंचायत कोष के इस आया और व्यय का पूरा लेखा रखा जाता था।

पंच सार्वजनिक स्थान, मन्दिर स्कूल और धर्मशाला व औषधालय इत्यादि के निर्माण व उनकी व्यवस्था का प्रबन्ध करते थे। कुछ लोग किसी मन्दिर या धर्मशाला का निर्माण करा उसकी व्यवस्था का कार्य पंचायतों को सौंप देते थे। जाति कार्य के लिए खरीदे बर्तन, जाजमें इत्यादि की देख–रेख पंच ही किया करते थे।[32]

पंच अपनी जाति के लोगों के सुख–दुख में हाथ बंटाते थे। वे बीमार व्यक्तियों की देख–रेख व संभाल लेते थे। जाति में यदि किसी व्यक्ति की आर्थिक स्थिति ठीक नहीं होती तो वे उसके जीवन निर्वाह के लिए कुछ प्रबन्ध करते थे। गरीब लड़कियों की शादियाँ व असहाय विधवाओं के भरण–पोषण की व्यवस्था में भी पंच बहुत कुछ हाथ बंटाते थे।[33]

मेणें, भील व बावरी जाति के मुखिया गोडवाड़ के गांवों में पुलिस का कार्य करते थे। वे लोगों के जान व माल की रक्षा करते थे। इसके लिए वे राजा और जागीरदार के रहते हुए भी गांव के लोगों से चौथ प्राप्त करते थे। चौथ देने वाले गांवों में साधारणतया चोरी होती ही नहीं थी। यदि कहीं चोरी हो जाती तो वे उसका पता लगाते थे। भाद्राजून के मेणे अहमदाबाद से आने वाले माल पर बोलावा की लाग सामान न लूटने की लेते थे। वे सामान के साथ स्वयं नहीं जाते थे परन्तु उनके नाम का बोलवा सुनकर ही लुटेरे डर जाते थे और सामान लूटने का साहस नहीं करते थे। यदि इस पर भी कही सामान लूट जाता तो वे उसका पता लगाकर चोर को पकड़वा देते थे।[34]

न्याय के लिए पंचायतों के समक्ष खान–पान, संगाई, नाता, तलाक, गोद, औसर–मौसर व्याभिचार, अपहरण इत्यादि के झगड़े आते थे। लेन–देन, भाई–बंटा, भूमि या खेतों का बंटवारा, गांवों का सीमा विवाद, तालाब व पोखरों में पानी की सीर व उनके उपयोग के झगड़े भी पंचायत तय होते थे। बनजारे, कालबेलिये व कुछ अन्य जातियों की पंचायतें चोरी के अभियोग की सुनवाई करती थीं।[35]

अपराध और दण्ड

पंचायतों द्वारा दण्ड अपराध पर निर्भर करता था। विभिनन प्रकार के अपराधों के लिए पृथक्–पृथक् दण्ड का विधान था। सबसे कठोर दण्ड जाति बहिष्कार था। यह दण्ड अधिकतर उन व्यक्तियों को दिया जाता था जो कि पंचों की आज्ञा नहीं मानते थे।

श्रीमाली ब्राह्मण खान–पान के नियमों को भंग करने वाले या किसी हत्या के अपराधी को सदा के लिए सदा बहिष्कृत कर देते थे लेकिन यदि वे किसी और कारण से किसी जाति बहिष्कृत करते हो उसे अपमानित कर जाति में पुनः सम्मिलित कर लेते थे। अपमानित करने का ढंग उनका बड़ा विचित्र था। वे उस व्यक्ति के मुंह और सर के सभी बाल कटवा देते थे। इस क्रिया को वह 'मूडंका' करना कहते थे। मूंडका करने के पश्चात् वे उसके सिर पर एक चौमुखा दीपक रखते थे। दीपक की चारों बत्तियों को जलाकर उसे जाति के सभी घरों में क्षमा याचना करने के लिए घुमाया जाता था। प्रदर्शन के समय लोगों का ध्यान उसकी ओर आकर्षित करने के लिए एक या दो व्यक्ति उसके आगे घण्टे की ध्वनि करते हुए चलते थे। प्रदर्शन के उपरान्त वह उससे कुछ दण्ड लेकर, जाति भोज में अपने साथ पंक्ति में बैठा लेते थे। पंक्ति में एक साथ भोजन कर लेने से वह व्यक्ति जाति में पुनः सम्मिलित समझा जाता था।[36]

संचोर ब्राह्मण मुर्दे का बारहवां दिन नहीं करने वाले को जाति के बाहर कर देते थे। जब वह बावन ब्राह्मणों को भोज देने की स्थिति में हो जाता, तब उससे 'पूतलविधि' करवाकर, जाति में पुनः सम्मिलित कर लेते थे।

जाति–बहिष्कृत व्यक्ति का लोग हुक्का–पानी बन्द कर देते थे। जाति का कोई व्यक्ति उसको निमंत्रण या उसके साथ बैठकर भोजन नहीं कर सकता था। उसके लड़के व लड़कियों के साथ जाति का कोई भी व्यक्ति शादी व्यवहार नहीं रखता था। उसका बहिष्कार न केवल उसके गांव में ही होता था वरन् दूसरे गांवों में भी जहां–जहां इसकी सूचना पहुंच जाती थी, उसका बहिष्कार हो जाता था। पंच अपने पत्रों द्वारा दूसरे गांवों में अपनी जाति के पंचों को धर्म और ईमान की शपथ दिलाकर उससे कोई सम्बन्ध न रखने का दबाव डालते थे। जाति बहिष्कृत व्यक्ति से सम्बन्धित सम्बन्ध रखने वाला व्यक्ति भी जाति से बाहर कर दिया जाता था। इतना ही नहीं जाति पंचायत ऐसे व्यक्ति के पूर्ण बहिष्कार के लिए ब्राह्मण, नाई, धोबी व हरिजन इत्यादि दूसरी जातियों के लोगों पर भी नैतिक दबाव डालती थी जिससे जाति–बहिष्कृत व्यक्ति का जीवन इस संसार में नरक समान हो जाता था।[38]

जाति बहिष्कार के अतिरिक्त दण्ड, अर्थ या धर्म–पुण्य के रूप में दिया जाता था। उच्च जातियाँ यदि अपनी जाति के किसी व्यक्ति का अपमान करना चाहती तो उस पर एक टके (दौ पैसों) का दण्ड लगाती थी, जिससे उस व्यक्ति की इज्जत दो पैसों के बराबर समझी जाती थी।[39] अर्थ दण्ड अपराधी की आर्थिक स्थिति को ध्यान में रखकर लगाया जाता था।[40]

अपमानजनक दण्ड जैसे जाति लोगों के जूते सिर पर रखवाना तो प्रायः सभी जातियाँ दिया करती थीं परन्तु निम्न जातियों में शारीरिक दण्ड की भी व्यवस्था थी। बालदिये अपने पंचों का कहना नहीं माने वाले को डंडे से पीटकर ठीक कर देते थे।[41]

समग्र रूप से विचार करने के पश्चात् हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते है कि तत्कालीन समाज–व्यवस्था में पंचों को विशिष्ट स्थान प्राप्त था। उनकी आज्ञा परमेश्वर की आज्ञा के रूप में स्वीकार्य होती थी एवं उनके निर्णयों में राज्य तथा जनमत के समर्थन का स्वर मुखरित होता था।

सन्दर्भ :

1. डॉ. दशरथ शर्मा, अर्ली चौहान डायनास्टीज. पृ. 203
2. वही, पृ. 204
3. मारवाड़ मर्दमसुमारी रिपोर्ट 1891, पृ. 154
4. सनद परवाना संवत् 1859 (पुरालेखा विभाग राजस्थान) पृ. 372, मा. म. सु.रि. पृ. 548
5. मा.म.सु.रि. पृ. 103
6. फुटकर बही कब्लीयत सं. 1904–1906 (पुरा लेखा विभाग राजस्थान)
7. वही, पृ. 1
8. फुटकर बही राजीनावा, न्याय इन्साफ सं. 1913 पृ. 2
9. व्यासजी के मुकदमें की मिसल, हकूमत नागौर सं. 1906 (हाईकोर्ट रेकार्ड)
10. आज भी पंचायतों की बैठक इन स्थानों पर होती हैं।
11. मा.म.सु.रि 1891, पृ. 49
12. आज भी खर्च पंचायत बुलाने वाले को ही देना पड़ता है।
13. व्यासजी के झगड़े की मिसल, हकूमत नागौर सं. 1906 (हाईकोर्ट रेकार्ड)
14. मुकदमों की फाइल सं.1899ण 1903 (पु.ले.वि.) पृ. 16
15. व्यासजी के मुकदमें की मिसल सं. 1907, नागौर
16. वही
17. सनद परवाना बही, 1858, पृ. 52
18. मुकदमें की फाइल सन् 1890–1903, पृ. 16
19. सनद परवाना बही, 1858, पृ. 44
20. फाइल अदालत के फेसले सन् 1890–1903 (पु.ले.वि.राज.)
21. सेंसज रिपोर्ट ऑफ इण्डिया, 1911 पृ. 497
22. व्यासजी के झगड़े की मिसल, हकूमत नागौर, सं. 1906
23. अदालत दीवाणी बही, सं. 1912 पृ. 33 (पुस्तक प्रकाश) जोधपुर
24. मा.म.सु.रि. पृ. 32
25. फुटकर बही, सं. 1913, पृ. 2
26. मा.म.सु.रि. पृ. 121
27. हथ बही,, 1948 सं. पृ. 3
28. मा.म.सु.रि. पृ. 45
29. मा.म.सु.रि. पृ. 45
30. यह प्रथा व इसके अधिकार का उपयोग पंच सन् 1928–30 तक करते थे।
31. मा.म.सु.रि. पृ. 486
32. मा.म.सु.रि. पृ. 06
33. सनद परवाना बही, 1858, पृ. 77 (जोधपुर अभिलेखागार)
34. मा.म.सु.रि. पृ. 45
35. वही, पृ. 123
36. देखिए उस समय की अदालत की बहियें।
37. मा.म.सु.रि. पृ. 155
38. फुटकर बही सं. 1916 पृ. 10(जोधपुर अभिलेखागार)
39. सेंसज रिपोर्ट ऑफ इण्डिया, 1911 पृ. 499
40. वही
41. सनद परवान बही, 1958, (जोधपुर अभिलेखागार)